शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 जुलाई 2017
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

निबंधकार के रूप में 'अज्ञेय'

पूनम साव (शोधार्थी)
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय
नई दिल्ली, भारत

शोध संक्षेप

हिंदी साहित्य के आधुनिक युग में जिन गद्य विधाओं का विकास हुआ है, उनमें मुख्यतः निबंध, जीवनी, संस्मरण, रेखाचित्र, व्यंग्य, रिपोतार्ज, डायरी, साक्षात्कार आदि तथ्याश्रित विधाएं बीसवीं शताब्दी की देन है। इन विधाओं के विकास में जिन लेखकों ने महत्वपूर्ण योगदान दिया है उनमें अज्ञेय का प्रमुख योगदान रहा है| निबंध लेखन की परंपरा में अज्ञेय एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में सामने आते हैं। हजारीप्रसाद द्विवेदी जी के बाद उनके निबंध लेखन में अबाधित तर्कपूर्ण विचारधाराओं का प्रवाह दिखाई पड़ता है। लेखक ने बड़े ही रागात्मक भाव से विषयों का प्रतिपादन किया है जो हमारे मन मस्तिष्क के पटल पर एक छाप छोड़ जाती है, और काफी देर तक हमें उन निबंधों में डूबे रहने हेतु बाध्य करती हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में निबंधकार के रूप में अज्ञेय के साहित्यिक अवदान पर विचार किया गया है।

भूमिका

सच्चिदानंद हीरानंद वात्सायन 'अज्ञेय' का नाम लेते ही सर्वप्रथम हमारे मन-मस्तिष्क में जो छवि उभरती है, वह मूलतः कवि की ही होती है। बहुत बाद में हम उन्हें एक निबंधकार के रूप में देखते हैं। निबंधकार के रूप में इन्हें बहुत ही एक सीमित वर्ग जानता है, अन्यथा हम उन्हें सदैव एक कवि, कहानीकार व उपन्यासकार के रूप में ही पढ़ते रहे हैं। बहुमुखी प्रतिभा के कलाकार 'अज्ञेय' का अनुभव संसार व्यापक है। इसे अभिव्यक्त करने के माध्यम भी बहुआयामी हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है कि 'अज्ञेय' की साहित्य-यात्रा निरंतर अपनी प्रगति की ऊंचे सोपान का स्पर्श करती रही है। यदि उनके व्यक्तित्व एवं कलात्मक प्रतिभा की बात की जाए तो वे स्वभाव से विद्रोही थे और भाषा, साहित्य, व्यक्ति स्वाधीनता, कला तथा संस्कृति के संबंध में पारम्परिक रूढ़ियों, अंधविश्वासों के प्रति 'नकार' उनकी रचना का प्रमुख अंग रहा है। उनका सृजन और चिन्तन रचना-कर्म के चरम उत्कर्ष को छूता रहा है। वह मानवीय व्यक्तित्व की स्वाधीनता के लिए, स्वाधीन चिन्तन के लिए जीवन-भर संघर्ष करते रहे। ऐसे संघर्षशील रचनाकार सच्चे अर्थों में समाज, संस्कृति के निर्माता होते हैं। 'अज्ञेय' के व्यक्तित्व एवं लेखन शैली की रामस्वरूप चतुर्वेदी ने एकदम सटीक व्यख्या की है -

"हिंदी साहित्य में पहली बार 'अज्ञेय' का व्यक्तित्व ऐसा मिलता है, जो रचनाकार भी वैसा ही उत्कृष्ट है जैसा कि व्यवस्थापक। प्रायः समूचे नए साहित्य की व्यवस्था में केंद्रीय व्यक्तित्व बने रहने पर भी 'अज्ञेय' की रचनाशीलता में कहीं कोई कमी नहीं आयी है। यह एक विलक्षण स्थिति है जहाँ व्यक्तित्व के दोनों पक्षों ने एक-दूसरे को प्रखतर और समृद्धतर बनाया है। यह पहले भी संकेत किया गया है रचना और साहित्य-चिंतन के दोनों पक्ष अज्ञेय के कृतित्व में घुल-मिल गए हैं। इस प्रकार रचना, साहित्य-चिंतन और साहित्यक व्यवस्था- ये तीनों

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 जुलाई 2017
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

प्रतिभाएं समान उत्कृष्टता के साथ एक ही व्यक्तित्व में समन्वित हुई है-अपने आपमें यह एक असाधारण और स्पृहणीय स्थति है।"

निबंधकार 'अज्ञेय'

अज्ञेय के लगभग सभी निबंध स्वाधीनता-प्रेम से अनुप्राणित हैं और यह स्वाधीनता केवल राजनीतिक सीमा में बँधी हुई नहीं हैं और न ही साहित्यिक सीमा से, बल्कि इसके आयाम इतने व्यापक है कि उसमें यथार्थ, संस्कृति, इतिहास और कला, पत्रकारिता और सम्पादन, दर्शन और धर्म जैसे विषय समा जाते हैं। इसका कारण बताते हुए कहते हैं, "प्रत्येक विषय एक-दूसरे से पारस्परिक रूप से जुड़ा होता है, किसी एक विषय की व्याख्या कर अन्य विषय को छोड़ना उनके लिए एक असमंजस की स्थिति पैदा करता है। उनके शब्दों में- "मैंने सोचा कि 'यथार्थ' के बारे में मेरी दृष्टि क्या रही उसकी चर्चा करूँ, तुरंत मैंने पाया कि भाषा की समस्या की चर्चा किए बिना मैं यथार्थ की चर्चा नहीं कर सकता। दूसरी तरफ मैंने पाया कि समाज की चर्चा किए बिना भी नहीं रह सकता; समाज की चर्चा करता हूँ तो फिर समाज की समस्याओं पर चर्चा अनिवार्य हो जाती है; संस्कृति की चर्चा अनिवार्य हो जाती है। संस्कृति की चर्चा की ओर बढ़ता हूँ तो धर्म और परंपरा की चर्चा आवश्यक हो जाती है; फिर दर्शन की समस्या उभर आती हैं; मनुष्य की क्या अवधारणा है उसकी चर्चा आवश्यक हो जाती है। मनुष्य की चर्चा करता हूँ तो स्वाधीनता की चर्चा अनिवार्य हो जाती है; स्वाधीनता की चर्चा करता हूँ तो राजनीति की और समकालीन समाज की, सामाजिक यथार्थ की चर्चा आवश्यक हो जाती है। इसलिए कहीं से भी आरम्भ करता हूँ तो बहुत से एक-दूसरे से जुड़े हुए प्रश्न सामने आ जाते हैं; कहीं किसी को काट कर अलग रख देना संभव नहीं है।" निबंध में इस प्रकार न तो उनका व्यक्तित्व खंडित था और न ही उनका चिन्तन।

अज्ञेय के निबंधों को किसी भी सीमा रेखा व विभाजन रेखा में बाँधना या उनके निबंधों को किसी निर्दिष्ट खाके में सीमित करना, उनके निबंधों के साथ न्याय करना नहीं होगा क्योंकि इनके निबंध अपने अंदर कई गुणों समाहित किए हुए हैं। इस संदर्भ में- "आत्मनिष्ठ और वस्तुनिष्ठ दो भेद करके अज्ञेय के निबंधों की व्यख्या करना गलत है, दिशा में चल पड़ना है। वे कहाँ 'स्व' को छोड़कर सर्वमय हो जाते हैं - यह रेखा खींचना भी कठिन है। क्योंकि उनके निबंध भाव-विचार कला-कर्म की उन्मुक्तता का आकाश छूते हैं। उनमें एक साथ सौन्दर्य, शोध और आनंद का प्रवाह है। विदग्ध व्यंग्य है और नए चिंतन की धूप खिली हुई है-इसलिए इन निबंधों में उनकी पूरी-आत्मकथा या जीवन कथा का रस रोमांच मौजूद है।"

इन्होंने कुछ निबंध 'वात्स्यायन' के नाम से, कुछ निबंध 'कुट्टिचातन' के नाम से और कुछ निबंध 'अज्ञेय' के नाम से लिखे हैं। जिसकी अपनी एक अलग ही विशेषता है।

अज्ञेय के वैचारिक निबंधों या कह सकते हैं कि आलोचनात्मक निबंधों में त्रिशंकु, स्रोत एवं सेतु, अद्यतन, युग सन्धियों पर, संवत्सर, धार और किनारे, केंद्र और परिधि, आलवाल इत्यादि है। इन निबंध संग्रहों में साहित्य की विविध समस्याओं के साथ सामाजिक, सांस्कृतिक शिक्षा, विज्ञान, भाषा, आधुनिकता व परम्परा की समस्याओं से संबंधित गहन एवं गम्भीर विचार-विमर्श किए गए है। सृजनात्मक स्तर पर इन निबंधों में कल्पना का पुट अपेक्षाकृत कम है। निबंध बहुत ही सुगठित, तर्कपुष्ट विवेचनों से

संपृक्त हैं। निबंध श्रृंखलाबद्ध, तर्कपुष्ट विवेचन के साथ धीरे-धीरे प्रवाहमान हुई है और वह भी बड़े ही संयत रूप से। भारतीय संस्कृति, भारतीय परम्परा, भारतीय आधुनिकता के साथ-साथ साहित्य-कला-संस्कृति, भाषा की मौलिक समस्याओं, चिन्ताओं, प्रश्नाकुलताओं से पाठकों का साक्षात्कार कराया है। परंपरा के महत्व को प्रतिपादित करते हुए लेखक कहते हैं- "कोई भी कला वस्तु, चाहे कितनी भी नयी क्यों न हो, ऐसी वस्तु नहीं जो आकस्मात अपने-आप 'घटित' हो गयी है; वह ऐसी वस्तु है, जो अपने आप में नहीं, अपने पूर्ववर्ती तमाम कलावस्तुओं की परंपरा के साथ घटित हुई है। जितनी ही वह नयी है, उतनी ही महत्वपूर्ण घटना कलावस्तुओं की परम्परा के साथ घटित हुई है; उतना ही परम्परा के साथ उसका संबंध का अन्वेषण करना प्रासंगिक हो गया है!" इस प्रकार वे परंपरा व अतीत का वर्त्तमान के साथ तारतम्य को दर्शाते हैं।

ललित निबंधों में 'कहाँ है द्वारका', 'सब रंग कुछ राग', 'लिखी कागद कोरे', 'जोग लिखी', 'संवत्सर' निबंध संग्रह प्रमुख रहे हैं। ये निबंध निजीपन, भावों की प्रधानता, मन की उन्मुक्त भटकन, व्यक्ति व्यंजकता, संस्मरणात्मक शैली, कल्पनात्मक उन्मुक्त उड़ान, सर्जनशीलता जैसे गुणों को समाहित किए हुए है, पर अंततः विषयों को ही प्रमुखता दी गई है। ये निबंध आत्मा के तल पर जितने स्थित रहते है उतने ही विचारों में लीन। हजारीप्रसाद द्विवेदी के बाद अगर कोई ललित व व्यक्तिव्यंजक निबंध के पुरोधा रहे हैं तो वे अज्ञेय हैं। उन्होंने अपने ललित निबंध में गीत-सदृश रामात्मकता, विषय-संगठन, स्वच्छंदता और विचार को भाव की जुगलबंदी से युक्त कर ललित शैली में प्रस्तुत किया है जो सांस्कृतिक बोध से जुड़कर इसे विशिष्ट बना देती है। इसमें निबंधकार को एक विषय में भाव व विचार के पंख लगाकर, अनुभूति को सार्थक अभिव्यक्ति का स्वरूप देकर, एक नए लालित्य-लोक में विचरण करना होता है। इस उपक्रम में उसे हर बार नया अनुभव और अनुभव में अभिनव आनंद की प्राप्ति होती है। इन सभी तत्वों को अज्ञेय के ललित निबंधों में देखा जा सकता है।

'कहाँ है द्वारका में' निबंध में लेखक लिखते हैं "भाव तो वहां है पर रंजित रूप से प्रस्तुत किया गया है। और वह रंजन उन्हें झूठा या हल्का करने के लिए नहीं हैं बल्कि आकृष्ट करने के लिए है-रंगत के प्रति भी उस मूल्यवान धातु के प्रति भी, जिसे रंजित किया है।" इसके अतिरिक्त रचनाकार ने आत्मपरक निबंध 'आत्मनेपद' लिखा, जिसमें उन्होंने स्वयं अपने और कृतियों के संबंध में स्पष्टीकरण दिया है, जो तार्किक आधार पर दिए गए हैं।

आत्मनेपद के अधिकांश निबंध इसी कोटि में आते हैं अर्थात् इस निबंध संग्रह में लेखक ने अपनी सृजन प्रक्रिया को काव्य, आख्यान, आलोचना, स्थिति और मन के संदर्भ में स्पष्ट किया है। इस प्रकार "विचार एवं चिन्तन प्रधान तथा आत्मव्यंजक एवं ललित दोनों ही प्रकार के निबंधों को मिला देने पर अज्ञेय का सजग, अनुभव समृद्ध और संवदेनशील व्यक्तित्व उभरकर सामने आता है। इसमें संदेह नहीं है कि 'अज्ञेय' हिन्दी के एक सशक्त निबंधकार हैं। निबंध शिल्प को उन्होंने एक नया आयाम दिया है। उनके निबंध उनकी जिज्ञासा वृत्ति से सीधे जुड़े हैं। इस वृत्ति की चरम परिणति जीवन की सार्थकता की उपलब्धि में हुई है। उनके निबंध इस उपलब्धि के साक्षी है।"

निष्कर्ष

कुल मिलाकर अज्ञेय के निबंधों में व्यक्तित्व की खोज, अस्मिता की तलाश, प्रयोग-प्रगति, परम्परा-आधुनिकता, बौद्धिकता, आत्म-सजगता, रागात्मक संबंधों में बदलाव, रूढ़ि और मौलिकता, साहित्यकार का दायित्व, पश्चिम से खुला संवाद, भाषा-शिल्प की गहन चेतना, संस्कृति और सर्जनात्मकता आदि जैसे तमाम विषयों को लेखक ने किसी न किसी रूप में निबंधों के केन्द्र में लाया है। उन्होंने नयी रचना-स्थिति की चुनौतियों पर अनेक कोणों से विचार किया है।

वस्तुतः "अज्ञेय उन सृजनशील लेखकों में हैं जिन्होंने साहित्यिक सृजनशीलता और रचनात्मक भाषा जैसे मुद्दों पर संवाद की इच्छा रखते हुए संस्कृति-संवाद जैसा माहौल बनाने के लिए प्रयत्न किया है और बहुत कुछ एक विचारक की तरह अपने भीतर और बाहर की संकट को परिभाषित करने की कोशिश भी की है। वह उन विचारकों में हैं जो वैयक्तिक स्वतंत्रता और कला स्वायत्ता का लगातार पक्ष लेते रहे हैं और उन रचनाकारों में हैं जो रचना में अद्‌वितीयता और सम्प्रेषण के द्‌वैत से जब-तब उलझते भी रहे हैं। चिंतन का सिलसिला बनाये रखने के लिए ऐसी अविच्छिन्न निष्ठा कम सर्जनात्मक लेखकों में पायी जाती है।"

सन्दर्भ ग्रन्थ

1 अज्ञेय और आधुनिक रचना की समस्या, रामस्वरूप चतुर्वेदी, पृ.सं.112

2 जोग लिखी, अज्ञेय, पृ.सं.14

3 आलोचक अज्ञेय की स्थिति, कृष्णदत्त पालीवाल, पृ.सं.-83

4 त्रिशंकु, अज्ञेय, पृ.सं.35

5 कहाँ है द्‌वारका, अज्ञेय, पृ.सं.भूमिका

6 हिंदी का गद्‌य -सहित्य, रामचंद्र तिवारी, पृष्ठ संख्या-808

7 आलोचना(62-63), आलेख डॉ.परमानन्द श्रीवास्तव, पृ.सं.29